प्रथम अध्याय

"शंकर पुणतांबेकर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व"

प्रथम अध्याय

''शंकर पुणतांबेकर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व''

❑ **प्रास्ताविक**

1.1 जीवन परिचय

1.1.1 जन्म

1.1.2 माता-पिता

1.1.3 बचपन

1.1.4 शिक्षा

1.1.5 पारिवारिक जीवन

1.1.6 मित्र एवं परिचित

1.1.7 नौकरी

1.1.8 पुरस्कार एवं सम्मान

1.2 व्यक्तित्व

1.2.1 बहिरंग व्यक्तित्व

1.2.1 अंतरंग व्यक्तित्व

1.2.2.1 प्रेरक व्यक्तित्व

1.2.2.2 समय के पाबंद

1.2.2.3 स्थितप्रज्ञ स्वभाव

1.2.2.4 सामान्य से असामान्यत्व का दर्शन

1.2.2.5 प्रसिद्धि से दूर रहनेवाले

1.2.2.6 मिलनसार स्वभाव

1.2.2.7 कर्तव्यनिष्ठ

1.2.2.8 पारदर्शी व्यक्तित्व

1.2.2.9 एक उत्कृष्ट वक्ता

1.2.2.10 झूठी शान से दूर रहनेवाले
1.2.2.11 पाठकों के प्रति जागरूक
1.2.2.12 आस्थावादी
1.2.2.13 अतिथिपूजा में तत्पर

1.3 कृतित्व
1.3.1 व्यंग्येतर रचनाएँ
1.3.2 व्यंग्य रचनाएँ
1.3.2.1 पुणतांबेकर की कुछ रचनाओं का संक्षिप्त परिचय
1.3.2.2 अप्रकाशित रचनाएँ
1.3.3 संपादन

❑ **निष्कर्ष**

प्रथम अध्याय

''शंकर पुणतांबेकर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व''

❑ प्रास्ताविक -

अहिंदी भाषी शंकर पुणतांबेकर हिंदी साहित्य में एक व्यंग्यकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। दूसरी पीढ़ी के व्यंग्यकारों में इनका विशिष्ट स्थान है। हिंदी व्यंग्य साहित्य सर्जना में इन्होंने अपना विशेष योगदान दिया है। इन्होंने व्यंग्य को नए कथ्य प्रदान किए हैं और साथ ही इसके शिल्प को भी समृद्ध बनाने के लिए प्रयत्नरत रहे हैं। पुणतांबेकर जी का व्यंग्य इतना प्रभावी होता है कि, यह पाठकों की मानसिकता बदल देता है। अपनी रचनाओं के माध्यम से इन्होंने मानव विरोधी मूल्यों का विरोध किया है। इन्होंने समाज में विभिन्न संस्थाओं आदि की अव्यवस्था और उस अव्यवस्था के कारण लोगों के जीवन में उत्पन्न हो रही नई समस्याओं को भी उद्घाटित किया है। इससे स्पष्ट होता है कि शंकर पुणतांबेकर अपने समाज के प्रति जागरुक थे। समाज में फैली अनीति का उन्होंने व्यंग्य रचनाओं के माध्यम से विरोध किया है।

उनकी प्रारंभिक रचनाओं में व्यंग्य इतना प्रभावी नहीं रहा है, जितना प्रभाव बाद में लिखी रचनाओं में दिखाई देता है। प्रारंभिक रचनाओं में व्यंग्य के साथ-साथ हास्य का भी प्रयोग किया गया है। अत: इनकी प्रारंभिक रचनाएँ हास्य-व्यंग्य रचनाओं की कोटि में आ जाती है। मई, 1957 में 'सरिता' में प्रकाशित इनकी रचना 'तमाचा' से इन्होंने व्यंग्य जगत में प्रवेश किया। बाद में 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ'(1972), 'रेडीमेड़ कपड़े'(1973), 'बचाओ, मुझे कवियों से बचाओ'(1980) आदि हास्य-व्यंग्य रचनाएँ भी लिखी हैं।

शंकर पुणतांबेकर ने साहित्य में भले ही पहले हास्य मिश्रित व्यंग्य का प्रयोग किया है, लेकिन उनके ही मतानुसार हास्य के प्रयोग से व्यंग्य का तीखापन कम हो जाता है। अत: व्यंग्य रचना में हास्य का प्रयोग नहीं करना चाहिए, अन्यथा व्यंग्य प्रभावी सिद्ध नहीं होगा। हास्य का प्रभाव पड़ने के कारण व्यंग्य बोझील हो जायेगा। इनकी प्रारंभिक रचनाएँ साधारण कोटि की हो कर भी बाद में इन्होंने राजनीति, साहित्य, शिक्षा, प्रेम, संस्कृति आदि विभिन्न विषयों पर एक से एक व्यंग्य रचनाएँ हिंदी साहित्य को दी हैं।

समय के साथ-साथ इनमें बौद्धिकता और प्रगल्भता बढ़ती गई और व्यंग्य की धार भी तेज बनती चली गई। धर्मवीर भारती ने इनके बारे में लिखा हैं - ''मैंने शंकर पुणतांबेकर की अनेक व्यंग्य कृतियाँ पढ़ी है और कुछ छापी भी हैं। उनके व्यंग्य में सुरूचि और सौद्देश्यता है।''[1] इससे उनकी व्यंग्य के प्रति गहन अध्ययनशीलता का परिचय मिलता है।

पुणतांबेकर को व्यंग्यशास्त्र का ज्ञान है और वे व्यंग्य-समालोचक भी हैं। डॉ. श्यामसुंदर घोष, डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी के पश्चात् व्यंग्य समीक्षा को व्यापक दृष्टि देनेवालों में शंकर पुणतांबेकर जी का नाम आ जाता है। इन्होंने एकांकी, लघुकथाएँ, उपन्यास, नाटक, निबंध आदि विभिन्न विधाओं में अपनी व्यंग्य-लेखनी चलाई है।

1.1 जीवन परिचय -

1.1.1 जन्म :

'कुंभराज' नामक कुल पाँच-छह हजार आबादी वाले देहात में रहनेवाले दक्खिनी-महाराष्ट्र, ब्राह्मण परिवार में पुणतांबेकर का जन्म हुआ। कुंभराज मध्यप्रदेश के जिला गुना में है। पुणतांबेकर के जन्म तारीख के बारे में भी कोई निश्चित मत नहीं है। कोई इनका जन्म 8 जनवरी, 1923 बताता है तो कोई 21 मई, 1925 बताता है। लेकिन पुणतांबेकर जी ने अपनी सुविधा की दृष्टि से दूसरी अर्थात् 21 मई, 1925 ही दर्ज करायी थी और आज भी वहीं चल रही है।

1.1.2 माता-पिता :

इनके पिताजी का नाम रघुनाथ राव था। इनकी पढ़ाई चौथी तक ही हो गयी थी। लेकिन उन्हें पढ़ने का बहुत शौक था। वे कुंभराज के पंचायत में क्लर्क थे। अपने पढ़ने के शौक के कारण वे मुंबई का 'नवाकाळ' नामक मराठी समाचार पत्र मँगवाते थे। यह पत्र हप्ते में दो बार प्रकाशित होता था। औंध जिला सातारा से प्रकाशित होनेवाला मराठी मासिक पत्र 'किर्लोस्कर' भी इनके घर आता था। पुणतांबेकर जी में पढ़ने की रुचि के बीज इन्हीं दो पत्रिकाओं के कारण पड़े। आगे इन दो पत्रिकाओं के साथ-साथ गोरखपुर से प्रकाशित होनेवाला 'कल्याण' मासिक भी आना शुरू हो गया। इसमें प्रकाशित देवी-देवताओं के चित्र लेखक को आकर्षित करते थे।

---

1. डॉ. बापूराव देसाई - हिंदी व्यंग्य एवं व्यंग्यकार, पृष्ठ - 121

पुणतांबेकर की माताजी भी अपने बच्चों की पढ़ाई को लेकर सजग थी। वह स्वयं निरक्षर थी। लेकिन चाहती थी कि, उनके बच्चे खूब पढ़े - लिखे। समय आने पर बच्चों की पढ़ाई के लिए अपने बचाए हुए पैसे खर्च करने में भी पीछे नहीं हटती थी।

इस प्रकार शंकर पुणतांबेकर के जीवन में उनके माता-पिता का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पिताजी की पढ़ने की आदत के कारण उनमें भी पढ़ने की रूचि निर्माण हो गई और माँ के आशीर्वाद से वे सफलता की ओर बढ़े।

1.1.3 **बचपन :**

शंकर पुणतांबेकर का कहना है कि व्यक्ति का बचपन कल्पना से भरा होता है। पुणतांबेकर का बचपन देहात में ही गुजरा। वहाँ के खेतों, खलिहानों और प्राकृतिक सौंदर्य ने लेखक को प्रभावित किया। इनका बचपन देहात में बिता अत: वह इसे अपना सौभाग्य मानते हैं क्योंकि देहात में रहने के कारण ही पुणतांबेकर देश की सच्ची मिट्टी का उससे जुड़े सुख-दुख का स्वयं अनुभव ले सके।

स्वातंत्र्यपूर्व काल में आज की जैसी कूटिल राजनीति नहीं थी और ना ही वर्तमान में गंभीर बनता चला जा रहा हिंदू-मुस्लिमवाला सवाल इतना गंभीर रूप धारण किए हुए था। इसका अर्थ यह नहीं कि तब सामाजिक स्थिति बिल्कुल ही सामान्य थी लेकिन इतनी भयंकर भी नहीं थी, जितनी आज हैं। हिंदू-मुस्लिमों में भेद-भाव था लेकिन आपसी मन-मुठाव नहीं था। झगड़े चोरियाँ आदि घटनाएँ भी होती थी लेकिन दंगे-खून जैसी वारदातें नहीं होती। आज की राजनीति की तरह स्कूल - कॉलेजों, सहकारी संस्थाओं आदि में नेतागिरी का प्रचलन भी इतने जोरों - शोरों से नहीं था। सामाजिक वातावरण में आतंक नहीं था। मुसलमानों के लिए अलग मुहल्ला नहीं था। हिंदूओं और मुस्लिमों के घर आस-पास ही थे। जिस तरह हिंदू-मुस्लिमों में भेदभाव था, वह ब्राह्मणों का हिंदूओं की अन्य जातियों के साथ भी था। उस भेद - भाव की जगह आज एक ऐसी दरार ने ले ली है जो लोकतंत्र के कारण दोनों के बीच पड़ी हैं।

उस समय हिंदू और मुस्लिम दोनों एक - दूसरे के त्योहारों में शरीक होते थे। लेखक के पिताजी किसी के यहाँ खाना नहीं खाते थे लेकिन वे जिस तरह रामकथा में शरीक

होते थे उसी तरह मौलूद में भी शरीक होते थे। पुणतांबेकर के घर के सामने ही कुंभराज के ताजिये (''मकबरे के आकार का कमचियों पर और रंगबिरंगे कागज, पन्नी आदि चिपकाकर बनाया हुआ मंडप जिसमें इमामहुसेन की कब्र बनी होती है। इसे मुहर्रम में शिया मुसलमान दस दिन तक रख कर गाड़ते हैं।''[1]) बनते थे। इन ताजियों के लिए पुणतांबेकर और उनका भाई दोनों मिलकर पन्नी-कागज काटने, लेई लगाने, सुतली से कमचियाँ बाँधने आदि का काम बड़े उत्साह के साथ करते थे।

पुणतांबेकर का बचपन गरीबी में बीता, जिसके कारण वे सुख-दुखों का अनुभव कर सके। इसी गरीबी ने उनके मन में देश के प्रति सहानुभूति का भाव जागृत किया और इसी कारण आज भी जब देश के साथ कोई गलत काम करता है, तो इन्हें बड़ा दु:ख होता है।

शंकर पुणतांबेकर उम्र के नौ-दस साल तक कुंभराज में ही रहें। वहाँ के नदी-नालों, मंदिरों, झोपड़ों, पेडों, परिचितों आदि की यादें आज भी उनके मानस पटल पर छाई हुई हैं।

1.1.4 शिक्षा :

इनकी तीसरी की पढ़ाई कुंभराज में हो गई थी। इनके पिताजी ने बच्चों की अच्छी पढ़ाई के लिए सन् 1933 में कुंभराज छोड़ा और विदिशा में आ गए। कुंभराज में तीसरी पास कर लेने के पश्चात् जब पिताजी के साथ वे विदिशा आ गए, तब विदिशा 'भेलसा' के नाम से जाना जाता था। लेखक तथा उनका भाई भेलसा के एंग्लो वर्नाकुलर मिडिल स्कूल में दाखिल हो गए। 1933 से 1939 तक लेखक विदिशा में ही रहे। मिडिल पास कर लेने के बाद आगे ग्वालियर चले गए और नौंवी कक्षा से लेकर बी.ए. तक की शिक्षा ग्वालियर में ही पूरी की। आग्रा में एल.एल.बी. के लिए दो वर्ष तक रहे।

विदिशा में ही इन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से टीचर कैंडिडेट के रूप में सन् 1950 में हिंदी विषय तथा सन् 1953 में इतिहास विषय में एम्.ए. किया। पीएच्.डी.(हिंदी) की उपाधि इन्होंने जलगाँव में सन् 1970 में पूना विश्वविद्यालय से प्राप्त की।

---

1. सं.श्री.नवल जी - नालंदा विशाल शब्द सागर, पृष्ठ - 509

1.1.5 पारिवारिक जीवन :

पुणतांबेकर का परिवार मूलत: पुणतांबा गाँव का निवासी होने के कारण 'पुणतांबेकर' नाम से जाना जाता था। 'पुणतांबा' एक सामान्य सी बस्ती है कि जो महाराष्ट्र मध्य रेल के मनमाड दौंड लाईन पर है। पुणतांबेकर जी के दादाजी यहाँ रहते थे। दादाजी के मौत के बाद पुणतांबेकर की दादी अपने बच्चों को लेकर ग्वालियर (मध्य प्रदेश) चली आयी।

शंकर पुणतांबेकर अपनी माता-पिता की पाँचवी संतान थे। इनमें से एक की जन्म के साथ ही मृत्यू हो गई थी। अत: इन्हें चौथी संतान ही कहा जा सकता है। इन्हें तीन भाई थे और तीन बहने थी और सभी इनसे छोटी थी। इन तीन बहनों में से दो ग्वालियर में ब्याही गई थी। सब से छोटी बहन इंदौर में ब्याही गई थी, जो अब नहीं है। इसने बी.ए. तक की पढ़ाई पूरी कर ली थी और सरकारी स्कूल में अध्यापिका थी। पहली दो बहनों की चौथी-पाँचवी कक्षा तक ही पढ़ाई हो गई थी।

इनके पहले दो भाईयों की पढ़ाई भी कम ही थी। वे दोनों भी बचपन से ही अपने चाचाजी के यहाँ रहते थे। चाचाजी की दरबारी नौकरी के कारण उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी थी। इन दोनों भाईयों की पढ़ाई सातवीं - आठवीं कक्षा तक ही हो गई थी। इस कारण उनकी नौकरियाँ भी कोई खास नहीं थी। लेकिन इनके तीसरे भाई सदाशिव जी ने मैट्रिक तक की पढ़ाई पूरी की और मैट्रिक के बाद उन्होंने मिलिटरी अकाउन्टस् की नौकरी पकड़ ली। अपनी इस नौकरी में उन्होंने खूब प्रगति की। इन भाई साहब ने शंकर पुणतांबेकर को मैट्रिक के बाद भी पढ़ने के लिए बहुत सहायता की। इन्हीं के कारण पुणतांबेकर अपनी आगे की पढ़ाई पूरी कर सके। पुणतांबेकर के कैरियर निर्माण में इन भाई साहब का बहुत बड़ा योगदान है। इन भाई साहब के दो लड़के हैं। दोनों भी इंजीनियर है - एक अमरिका में है, एक भारत में ही ग्राऊंड इंजीनियर है।

विदिशा (मध्य प्रदेश) में ही आगे पुणतांबेकर का विवाह इंदौर की मालती झोकरकर से दिसंबर, 1943 में संपन्न हुआ। वह झोकरकर से पुणतांबेकर बन गई और उसका मालती नाम बदलकर 'पुष्पलता' रखा गया। इन्हें तीन बेटें और एक बेटी है। बड़ा बेटा अरविंद औरंगाबाद (मराठवाडा) में भारतीय स्टेट बैंक में अफसर है, मँझला बेटा सुहास मुंबई में

हिंदुस्थान कन्स्ट्रक्शन कंपनी में जनरल मैनेजर अकाउन्टस् है और छोटा मनोहर नासिक में सार्वजनिक निर्माण विभाग में डिप्टी इंजीनियर है। इन सभी के विवाह हो चुके हैं और पुणतांबेकर को पोता-पोती भी है। इनकी चौथी संतान रश्मि जलगाँव में ही इन्हीं के पास रहती है। रश्मि रूप - गुणवाली हो कर भी हालात के कारण तलाकशुदा है। वह नौकरी करती है और साथ ही घर का भी खयाल रखती है।

1.1.6 मित्र एवं परिचित :

पुणतांबेकर जी के मित्र कम ही है। अत: अध्यापक के नाते छात्रों से तथा लेखक के नाते पाठक, संपादक, प्रकाशक, समीक्षक आदि परिचित के रूप में बहुत दूर तक फैले हैं। लेकिन इनमें घनिष्ठ मित्र कोई नहीं है। उन्हें अपने मित्रों - परिचितों के संबंध में पूछने पर वे लिखते हैं कि, '' निकटवर्ती मित्र और परिचित कम ही हैं। बढ़ती उम्र के साथ एक अंतर पैदा हो जाता है और यह आदर के रूप में होता है, फिर मैं प्राध्यापक रहा। इस स्थिति में भी कुछ होते हैं जिनमें मनुष्य जोड़ने की प्रवृत्ति होती है और दु:ख के साथ कहना पड़ता है कि वह मेरी नहीं है। मेरे घनिष्ठ मित्र और परिचित कोई हैं तो वे हैं पुस्तकें।''[1]

जहाँ तक मित्रों की बात हैं वे बताते हैं कि उनकी तेरह वर्ष की नौकरी में उनके तीन अच्छे मित्र बने, जिनमें से एक अब नहीं रहें। दूसरे हैं डॉ. तेजपाल चौधरी (भाषाशास्त्र के पीएच्.डी. तथा निवृत्त हिंदी प्राध्यापक) और तीसरे सुधीर ओखदे जो पुणतांबेकर को गुरू मानते हैं, लेकिन उनका आपसी संबंध एक मित्र के समान है। ये आकाशवाणी में कार्यक्रम अधिकारी हैं। इन मित्रों से मिलने पर ये साहित्यिक गपशप के साथ ही और अन्य दुनिया भर की बातों पर चर्चा करते हैं।

1.1.7 नौकरी :

शिक्षा क्षेत्र में कार्यरत होने से पहले शंकर पुणतांबेकर ने आगरा में एल.एल.बी. करते समय एक वर्ष युद्धकाल के टेंपरी मिलिटरी एकाउंट्स में नौकरी की थी। विदिशा में एस.एस.एल. जैन हायस्कूल में इन्हें हायस्कूल टीचर की नौकरी मिली थी। पुणतांबेकर जी इस नौकरी में खुश थे, क्योंकि यहाँ उन्हें अपने तरीके से जीने की सोचने की पूरी स्वतंत्रता थी और

---

1. परिशिष्ट - 2 से उद्धृत

सब से महत्त्वपूर्ण बात यह कि वे अपनी भूमि से दूर नहीं थे, अपनों के बीच में ही रह कर वे अपना काम कर सकते थे।

1951 में विदिशा का जैन हायस्कूल, इंटर कॉलेज बन गया और पुणतांबेकर भी एक अध्यापक से व्याख्याता के पद पर नियुक्त हो गए। पुणतांबेकर यह सोचते थे कि इसी प्रकार से यह कॉलेज जब डिग्री कॉलेज बन जायेगा तब वे कनिष्ठ व्याख्याता से वरिष्ठ व्याख्याता बन जायेंगे और साथ ही अपनी भूमि में रह कर ही उन्हें अपनी इच्छा पूर्ण करने का मौका मिलेगा जिसके लिए उन्होंने एम.ए. किया था। लेकिन इंटर कॉलेज से डिग्री कॉलेज बन जाने पर भी पुणतांबेकर वरिष्ठ व्याख्याता के पद से वंचित रहे। तब उन्होंने 1960 में अपनी यह नौकरी छोड़ दी और जलगाँव चले आए। तब जलगाँव का कॉलेज पूना विश्वविद्यालय से संलग्न था। जलगाँव में हिंदी विभाग अध्यक्ष के रूप में कार्यरत होने के कारण पूना से इनका संबंध बना रहा। पुणतांबेकर 1960 से 1985 तक जलगाँव के एम.जे. महाविद्यालय में हिंदी विभाग अध्यक्ष का कार्यभार सँभाले हुए थे और तब तक हिंदी के लेखक के रूप में प्रसिद्ध भी हो गए थे।

1.1.8 पुरस्कार एवं सम्मान :

शंकर पुणतांबेकर को अब तक निम्न पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है -

1. 'हरियाली और काँटे' कृति पर इन्हें केंद्रिय हिंदी निदेशालय की ओर से 'अहिंदी भाषी साहित्यकार' पुरस्कार 1976 में प्रदान किया गया।
2. सन् 1992 में महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी, मुंबई का 'मुक्तिबोध पुरस्कार' प्राप्त हुआ।
3. मध्य प्रदेश साहित्य संघ, भोपाल का अक्षर साहित्य सम्मान (1995)।
4. 1994 में रंग चकल्लस द्वारा प्रदत्त 'चकल्लस पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।
5. 'आनन्द ऋषि जी साहित्य पुरस्कार' दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद से मिला है।

इस प्रकार से पुणतांबेकर अपने जीवन में उपर्युक्त पुरस्कारों से सम्मानित हुए हैं। इन्होंने विभिन्न संगोष्ठियों, परिचर्चाओं में भी अध्यक्षीय स्थान भूषित किया है।

1.2 व्यक्तित्व -

'व्यक्तित्व' का कोशगत अर्थ इस प्रकार दिया है -

नालन्दा विशाल शब्द सागर के अनुसार 'व्यक्तित्व' का अर्थ इस प्रकार से है - "1. व्यक्ति का गुण या भाव। 2. वे विशेष गुण जिनके द्वारा किसी व्यक्ति की स्पष्ट और स्वतन्त्र सत्ता सूचित होती है। पर्सनैल्टी।"[1]

अर्थात् हम कह सकते हैं कि रूप-रंग, गुण, स्वभाव, सामर्थ्य आदि के संगठन से ही व्यक्तित्व बनता है। बहिरंग व्यक्तित्व और अंतरंग व्यक्तित्व इन दो रूपों में व्यक्तित्व का विचार किया जा सकता है।

1.2.1 बहिरंग व्यक्तित्व :

व्यक्ति के प्रथम दर्शन में जो आकृती हमारे सामने खड़ी हो जाती है, उसे बहिरंग व्यक्तित्व कहते हैं। इसमें व्यक्ति के रंग-रूप, शारीरिक गठन आदि के आधार पर उसके स्वभाव का अंदाजा लगाया जाता है।

शंकर पुणतांबेकर एक ऐसा व्यक्तित्व है, जो अपने गुणों से सब को प्रभावित किए हुए हैं। रहन-सहन की दृष्टि से अत्यंत साधारण लेकिन विचारों से प्रगल्भ हैं। शंकर पुणतांबेकर स्वयं अपने बारे में लिखते हैं - "ईश्वर की कृपा से इस 76 या 78 की उम्र में मेरा स्वास्थ्य ठीक है। कहने को मेरा कुल वजन 44 किलो ही है। भाग्य ने मुझे नाम, पैसा, यश, सूरत-शकल, प्रतिष्ठा की भाँति कद-काठी भी यथा तथा ही दी है। दुबली-पतली।"[2]

इनकी पैनी दृष्टि से कोई चीज छूटती नहीं है। घर पर रहते समय अत्यंत साधारण-सी पोशाक पहनते हैं जैसे, पाजामा और सैण्डो बनियान। तथा आँखों पर काले फ्रेम का चश्मा पहने हुए हमेशा अध्ययन में व्यग्र दिखाई देते हैं। तेजपाल चौधरी 'शंकर पुणतांबेकर : एक प्रेरक व्यक्तित्व' इस लेख में उनके बारे में लिखते हैं कि, "शंकर पुणतांबेकर से मेरा प्रथम

---

1. सं. श्री. नवल जी - नालंदा विशाल शब्द सागर, पृष्ठ 1309
2. सं. डॉ.बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - 'व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर' में संकलित लेख 'मैं : शंकर पुणतांबेकर' से उद्धृत।

परिचय कॉलेज के दिनों में हुआ। बदन पर हल्का सलेटी कोट, सिर पर सॉफ्ट हैट और पिंडलियों पर लपेटी हुई क्लिप लगी पैण्ट, साइकिल पर धीमी चाल से चले आते एक गंभीर प्रोफेसर की छवि। ... न वेशभूषा में आकर्षण न चाल-ढाल में। ... एक रुखा-सा गद्यगन्धी व्यक्तित्व। परंतु जैसे - जैसे समय बीतता गया, उनसे मेरी घनिष्ठता बढ़ती गई और शीघ्र ही वे मेरे लिए आदर्श और अनुकरणीय बन गए।''[1]

इस तरह पुणतांबेकर एक साधारण व्यक्तित्व के लेकिन प्रभावी विचारों के धनी हैं।

1.2.2 अंतरंग व्यक्तित्व :

अंतरंग व्यक्तित्व से ही व्यक्ति की सही पहचान होती है। इसमें व्यक्ति के भाव-भावनाओं, कल्पनाओं, विचारों, प्रवृत्तियों, अनुभवों, चिंतनवृत्ति आदि का समावेश होता हैं। पुणतांबेकर जी के व्यक्तित्व में भी कुछ ऐसे पहलू दिखाई देते हैं।

1.2.2.1 प्रेरक व्यक्तित्व :-

अपने व्यक्तित्व से प्रथम दर्शन में सामान्य से दिखनेवाले पुणतांबेकर अनेकों के आदर्श स्थान बन जाते हैं। अपने व्यवहार से वे सामनेवाले को प्रभावित करते हैं। पुणतांबेकर जी को जब भी संगोष्ठियों आदि में बुलाया जाता है तो अपना पूरा समय उसे ही देते हैं। लोगों की बातें ध्यान से सुनते हैं। अपनी बात वह हमेशा नए ढंग से सामने रखते हैं। यहीं कारण है कि वे जिस प्रकार विद्वानों में प्रिय हैं, वैसे ही अपने छात्रों में भी प्रिय बने रहे।

शंकर पुणतांबेकर हिंदी साहित्य क्षेत्र में स्थापित लेखक है। इसलिए हिंदी की पत्र-पत्रिकाएं इनकी रचनाओं को छापने के लिए हमेशा उत्सुक रहती हैं। इतना होने पर भी वे नवीन तथा उभरती हुई छोटी-सी-छोटी पत्रिका के लिए भी लिखते हैं। पत्रिका छोटी है इस कारण उसमें अपनी रचना देने के लिए उन्होंने कभी टाल-मटोल नहीं किया। वे समझते हैं कि पत्रिका निकालना एक साहसिक काम है, उसे बढ़ावा देना चाहिए। इस प्रकार कुछ नया करने की इच्छा रखनेवालों को हमेशा प्रेरणा देते हैं।

---

1. सं.डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर, पृष्ठ - 28

1.2.2.2 **समय के पाबंद :-**

शंकर पुणतांबेकर के व्यक्तित्व को प्रभावी बनाती है - उनकी समय के प्रति जागरूकता। पुणतांबेकर जी अपने दिए हुए वक्त को पूरी कोशिश के साथ निभाते हैं। किसी को अगर मिलने का वक्त दिया हो तो वह कभी देर नहीं करते बल्कि समय से पाँच मिनट पहले ही निश्चित जगह पर पहुँच जाते हैं। उनकी इस समय की पाबंदी को देख कर कोई भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता। वह अपने दिए हुए समय पर पहुँच ही जाते हैं, फिर चाहे कोई समारोह हो, मुलाकात हो या फिर कॉलेज की कक्षा हो। पुणतांबेकर कहते हैं - ''जिंदगी में मैं समय को महत्त्व देता हूँ। मुझे लगता है कि ईश्वर मुझ से पल-पल का हिसाब माँगेगा। यह भी है कि उसने मुझे किसी लक्ष्य से धरती पर भेजा है - समय देकर, शब्द देकर।''[1]

कोई अगर आने में देर करता है तो इन्हें बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। देर से आनेवाला कोई भी छात्र उनके आने के बाद कक्षा में प्रवेश करने की हिम्मत नहीं कर पाता था। पुणतांबेकर स्वयं वक्त के पाबंद हैं और चाहते हैं कि सभी समय का पालन करें।

1.2.2.3 **स्थितप्रज्ञ स्वभाव :-**

उनका स्वभाव भी स्थितप्रज्ञ है। कभी भी दुःख के कारण डगमगाते नहीं या आनंद की अधिकता से उछलते नहीं। कठिन से कठिन स्थिति का भी डट कर सामना करते हैं। ऐसे समय पर शांत चित्त रहकर मौन धारण करते हैं और मानो तुफान उन्हें बिना छुए ही गुजर जाता है। जब इनका जिला पेठ में स्वागत लॉज के पासवाला मकान जो उनके जीवन की महत्त्वपूर्ण यादों से जुड़ा था और वह एक कोर्ट के आदेश के कारण छोड़ना पडा था, उस वक्त उनकी इस स्वभाव की प्रचीति हो जाती है। इस मकान में इन्होंने साहित्य सृजन किया था। उनके बेटे-बेटियों के विवाह की यादें इस घर से जुड़ी थी। कमलेश्वर, महादेवी वर्मा, रामदेव शुक्ल, डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी, डॉ. श्यामसुंदर घोष आदि के यादों का साक्षी तथा मुक्तिबोध सम्मान, व्यंग्य अमरकोश, गुलेल का खाका, सुख-दुःख की अनुभूतियों से युक्त इस वास्तू को केवल कोर्ट के आदेश के कारण न चाहते हुए भी छोड़ना पड़ा। लेकिन इस स्थिति का भी उन्होंने डट कर सामना किया। डॉ. सुरेश माहेश्वरी लिखते हैं - ''कोर्ट आदेश, पर काका

---

1. सं.डॉ.बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर में संकलित लेख 'मैं : शंकर पुणतांबेकर' से उद्धृत।

हमेशा की तरह कुर्सी पर घुटने मोड़ कर हाथ बाँधे स्थितप्रज्ञ - से बैठे रहे - ऊपर से निर्विकार चेहरा, पर अंदर - ही - अंदर शायद तूफान का सामना कर रहे थे। स्थिति यह है कि शायद रक्तचाप बढ़ जाए या कुछ अघटित हो जाए। पर उन्होंने बड़े साहस के साथ गीता में वर्णित अलिप्त के साथ इतनी बड़ी बात को सहज - सामान्य रूप से झेला।''[1]

इस प्रकार से उनका तटस्थ एवं स्थितप्रज्ञ स्वभाव हमारे सामने आदर्श के रूप में उपस्थित हो जाता है।

1.2.2.4 सामान्य से असामान्यत्व का दर्शन :-

पुणतांबेकर के आचार - विचारों से उनके निकटवर्ति हमेशा प्रभावित होते रहे हैं। उनके सामान्य से दिखनेवाले व्यक्तित्व में कई ऐसे पहलू हैं जो उन्हें सामान्य नहीं बने रहने देते। उनकी असामान्यता अनायास ही उभरकर सामने आ जाती है।

उन्हें यात्रा करना बेहद पसंद है। यह यात्राएँ ज्यादा तौर पर खुद के लिए न हो कर बुलानेवालों के लिए ही होती है। एक बार आने का वादा करने के बाद वे ठीक समय पर पहुँचते ही हैं। कभी भी कोई शर्त नहीं रखते हैं और ना ही किसी भौतिक सुविधाओं की माँग करते हैं। उन्हें आने-जाने के लिए कोई भी सवारी चल जाती है। समय आने पर उन्होंने आलूओं के बोरियों से भरे मेटाडोर से भी यात्रा की है। यहाँ पर ऐसी स्थिति में वे अपने श्रेष्ठत्व को संभालने में वक्त जाया नहीं करते। इस प्रकार से वे पूरा ध्यान रखते हैं कि उनकी वजह से बुलानेवाले को कोई दिक्कत न हो।

पुणतांबेकर अपने आप में एक सामान्य आदमी को ही देखते हैं। उनके इसी सामान्य बने रहने में ही उनके असामान्यत्व के दर्शन होते हैं।

1.2.2.5 प्रसिद्धि से दूर रहनेवाले :-

आज के विज्ञापन के युग में जहाँ हर कोई अपनी प्रसिद्धि के लिए प्रयत्नरत रहता है, वहाँ पुणतांबेकर इन सब चीजों से कोसों दूर रहना ही पसंद करते हैं। इस युग में कोई भी एकाद रचना लिख कर अपने आप को साहित्यकार की कोटि में रखता है। एक ही रचना को अलग-अलग संग्रहों में छाप कर केवल पुस्तकों की संख्या बढ़ा कर प्रसिद्धि पाने कि कोशिश

---

1. सं.डॉ.बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर, 'आशुतोष औघड़ महादेव 'शंकर'', पृष्ठ - 24

की जाती है। योग्यता न होने पर भी कोई भी छोटा-मोटा व्यक्ति संपादक बन जाता है। लेकिन पुणतांबेकर है कि इन्हें अपनी रचनाओं की संख्या भी याद नहीं रहती। वे इस नकली विज्ञापनबाजी से दूर ही रहे हैं।

1.2.2.6 मिलनसार स्वभाव :-

इनकी मुद्रा धीर-गंभीर दिखाई देती है लेकिन वे कभी अकेले नहीं रहे। उनके पास संगठन कौशल है। वे अपनी बातों से लोगों को अपना बना लेते हैं लेकिन वे बातुनी नहीं है। ऊपर से गंभीर दिखाई देनेवाले पुणतांबेकर अंदर से एकदम विनोदबुद्धि के हैं। डॉ. तेजपाल चौधरी 'शंकर पुणतांबेकर : एक प्रेरक व्यक्तित्व' इस लेख में लिखते हैं -''मैंने महसूस किया कि वे एक कोमल हृदय व्यक्ति हैं, जिनके लिए मुझे एक ही उपमान जँचता है - नारियल ... ऊपर से ऊबड़ - खाबड़ परन्तु अंदर से स्वच्छ, मधुर और पानी - भरा।''[1]

जरुरत मंद लोगों की सहायता के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं। किसी की भी कोई भी जरुरत हो, जो इनसे बन पड़ता है, वह बिना कोई अपेक्षा रखे कर देते हैं। इस मदद के बदले वे कोई भी अपेक्षा नहीं रखते, धन्यवाद की भी नहीं। कोई भी इनसे जिस चीज की जरुरत पड़े माँग ले जाता है। बाद में वह चीज लौटाई जाती है या नहीं भी। कई बार लोगों ने उनके इस स्वभाव का गलत फायदा उठाया है। उनके मिलनसार स्वभाव का अनुभव उनके घर आनेवाला दूधवाला, पोस्टमैन से लेकर मेहतरानी तक सब को है। डॉ. विनोद शंकर शुक्ल ने 'शंकर पुणतांबेकर : सरल सुभाऊ छुआ छल नाहिं' इस लेख में लिखा हैं - ''उनके भीतर मुझे प्रेम का न सूखनेवाला सरोवर दिखाई दिया। ऐसा सरोवर जो संपर्क में आनेवाले को अंतरंगता से नहलाये बिना नहीं छोड़ता।''[2]

अन्यत्र गंभीर रहनेवाले पुणतांबेकर जी बच्चों के साथ बच्चे बन जाते हैं। उनसे खेलते हैं, बाते करते हैं, कभी - कभी अपने मित्रों आदि की उनसे शिकायत भी करते हैं। उन्हें बच्चों से बहुत लगाव है। कभी तो बच्चे उनके पास से अपनी माँ के पास जाने के लिए भी राजी नहीं होते। इस प्रकार अपने आत्मीयता भरे व्यवहार से इन्होंने अपने संपर्क में आनेवाले सभी का मन जीत लिया है।

---

1. सं.डॉ.बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर, पृष्ठ - 28
2. वही, पृष्ठ - 33

1.2.2.7 **कर्तव्यनिष्ठ अध्यापक :-**

वे अपने काम के प्रति कर्तव्यनिष्ठ हैं। अपने काम को पूरी ईमानदारी से निभाते हैं। क्लास में कभी भी कोई देर से आए यह उन्हें पसंद नहीं था। वह स्वयं कॉलेज में वक्त से पाँच मिनट पहले ही पहुँच जाते थे। उनका व्यक्तित्व भी देखने में गंभीर लगता है। उनके इस गंभीर व्यक्तित्व के कारण देर से आनेवाले छात्र कक्षा में आने की हिम्मत नहीं करते। पुणतांबेकर अपने कर्तव्य के प्रति एकनिष्ठ थे। वे जब पढ़ाते थे तब पढ़ाने में इतने तल्लिन हो जाते थे कि समय उनके लेक्चर में कभी बाधा नहीं डाल पाता था। उनका लेक्चर कभी पौने घंटे या एक घंटे की पाबंदी में नहीं चला, वह आसानी से एक सौ बीस मिनटों तक चलता था। वे पढ़ाते समय कभी भी कुर्सी पर नहीं बैठते थे। अगर बहुत आवश्यक हुआ तो वे मेज के एक कोने पर टिके हुए बैठते थे। उनके बोलने की गति और छात्रों के डिक्टेशन लेने-समझने की गति में एक प्रकार का समन्वय था। पुणतांबेकर विद्यार्थी के प्रश्नार्थक चेहरे को देख स्वयं उसकी कठिनाई पूछ कर उसकी शंका का सही - सही समाधान कर देते।

पुणतांबेकर अपने कर्तव्य से भलि - भाँति परिचित थे और उसे निभाना भी जानते थे। उन्होंने अपने मित्र जन में, परिवार में एवं एक अध्यापक की दृष्टि से अपनी भूमिका बखूबी निभाई है।

1.2.2.8 **पारदर्शी व्यक्तित्व :-**

शंकर पुणतांबेकर के व्यक्तित्व में स्थान के अनुसार कभी भी बदलाव नहीं आता। वे जैसे है वैसे ही समाज में भी दिखाई देते हैं। उनके खाने के दाँत अलग और दिखाने के अलग नहीं हैं। उनका व्यक्तित्व बिल्कुल पारदर्शी है। कोई बेकार का प्रदर्शन नहीं तथा कोई औपचारिकता नहीं। वह हमेशा नवोदित साहित्यकारों को प्रोत्साहन देते हैं, उन्हें सुनते हैं। वे पुरस्कार पाने हेतु भाग-दौड़ नहीं करते। उनका व्यक्तित्व विनय से संपन्न है। उनके गुण उनके नाम को सार्थ करते हैं। पुणतांबेकर जी को बार - बार देखने पर भी उनके व्यक्तित्व में एक ही आदमी मिलता है और वह है - शंकर पुणतांबेकर। इस प्रकार इनका व्यक्तित्व भीतर - बाहर से एक जैसा ही है - पारदर्शी।

1.2.2.9 **एक उत्कृष्ठ वक्ता :-**

पुणतांबेकर एक श्रेष्ठ व्यंग्यकार तो है ही साथ ही वे एक उत्कृष्ठ वक्ता भी है। जिस बात को श्रोताओं तक पहुँचाना है उस बात को सारगर्भित शब्दों में उन तक पहुँचाते हैं। उनके वक्तव्य में झूठा आवेश या झूठी भावुकता कहीं भी नहीं दिखाई देती। थोड़े ही समय में अपने वक्तव्य को पूरी क्षमता और प्रभाव से प्रस्तुत करने का कौशल उनमें हैं। किसी की कमियों को वह इस प्रकार से निर्दिष्ट करते हैं कि उस व्यक्ति को बूरा भी न लगे और वह अपनी कमियों को सुधारने हेतु दिशा भी प्राप्त कर सके। अपने वक्तव्य को उत्कृष्ट रीति से श्रोताओं के सम्मुख रखकर उनमें परिवर्तन की चेतना जगाने का कार्य भी सिद्ध करते हैं। इस दृष्टि से पुणतांबेकर एक उत्कृष्ट वक्ता कहे जा सकते हैं।

1.2.2.10 **झूठी शान से दूर रहनेवाले :-**

शंकर पुणतांबेकर ने कभी भी अपने जीवन में भौतिक सुविधाओं पर फिजूल खर्च नहीं किया। वह महाविद्यालय में हमेशा साइकिल से जाते थे। उनकी आर्थिक स्थिति ऐसी थी कि वे स्कूटर खरीद सके, लेकिन फिर भी उन्होंने अपनी साइकिल से सफर करना नहीं छोड़ा इस बात को लेकर उनके अन्य सहकारी कभी - कभी उनकी ठिठोली भी करते थे। डॉ. सुरेश माहेश्वरी ने 'आशुतोष औघड़ महादेव 'शंकर'' इस लेख में इस संदर्भ में लिखा है कि किस प्रकार से उनके सहकारी उनकी ठिठोली करते थे - ''अब तो बड़े हो जाओ। पैरो में चुड़िया (पैंट की मोहरी की लगाई जानेवाली स्टील की रिंग) पहनना छोड़ो, स्कूटर ले लो, इतने पैसों का क्या करोगे ?' उनका जवाब होता - 'इस सवारी में जो मजा है वह अन्य कहाँ ? साइकिल धूल का गुब्बारा नहीं उड़ाती, इसलिए मैं सवारी पर होते हुए भी लोगों से दूर नहीं हूँ। साइकिल और मेरा दिमाग साथ - साथ चलते हैं। ऐसा सुख तुम्हारी मोटरसाइकिल में हैं ? मेरी असली खुराक राह पर घटने वाली घटनाएँ और चलने वाले राहगीर हैं।''[1]

इस प्रकार से पुणतांबेकर बेवजह केवल शान को बढ़ाने वाली सुविधाओं को नहीं अपनाना चाहते।

---

1. सं.डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर, पृष्ठ - 23

1.2.2.11 पाठकों के प्रति जागरुक :-

शंकर पुणतांबेकर की एक और विशेषता मालूम हुई जो मैंने प्रत्यक्ष अनुभव की। उनके बारे में पढ़ा था कि वे अपने पाठकों के पत्रों के उत्तर शीघ्र ही भेज देते हैं। मैंने भी उन्हें पत्र लिखा और एक-दो हफ्ते के अंदर ही उनका जवाबी पत्र मेरे हाथ में था। मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कि उनके बारे में जैसा पढ़ा वैसा ही पाया। यह केवल उनकी तारीफ नहीं तो एक सच्चाई है। शंकर पुणतांबेकर अपने पाठकों की जिज्ञासा को यथासंभव शांत करने का प्रयास करते हैं। उम्र की 79-80 वर्षों की आयु में अब भी उनका लेखन कार्य बड़े उत्साह के साथ शुरू है। अपनी इस व्यस्तता से वक्त निकालकर पाठकों की जिज्ञासा को तृप्त करना भी वे भूलते नहीं।

1.2.2.12 आस्थावादी :-

पुणतांबेकर बहुत ही आस्थावादी और आस्तिक है। वह ईश्वर पर विश्वास करते हैं। तीर्थक्षेत्रों पर जाते हैं तो वहाँ के समुद्र में स्नान करते हैं, नदी में श्रद्धा भाव से डुबकी लगाते हैं। उनका यहीं विश्वास उन्हें जीवन से जूझने की शक्ति प्रदान करता हैं। वे कहते हैं - ''मैं पक्का आस्तिक हूँ। नास्तिकता की आधुनिकता मैं नहीं ओढ़ सका। मूल्य में ईश्वर को देखता हूँ। पूजा-अर्चा को मन-मस्तिष्क का व्यायाम मानता हूँ। मूल्यहीनों और शॉर्टकटवालों से मुझे बेहद चिढ़ है।''[1] उन्हें इससे सदा आत्मिक शक्ति प्राप्त होती रही हैं। जीवन के बड़े - बड़े कठिन क्षणों में इन्होंने बड़े ही संयम से उनका सामना किया है। यह आस्था उन्हें संकटों से जूझने के लिए निड़र बनाती है। जितनी उनकी ईश्वर पर गहरी श्रद्धा है उतनी ही गहरी आस्था पंचमहाभूतों के प्रति भी है।

1.2.2.13 अतिथिपूजा में तत्पर :-

घर आए हुए मेहमान का स्वागत शंकर पुणतांबेकर प्रसन्नता से करते हैं। फिर चाहे आया हुआ मेहमान उनके परिचय का हो या अपरिचित। घर आए हुए उनके छात्र भी उनसे उतना ही आदर-सत्कार पाते हैं, जितना अन्य व्यक्ति को मिलता है। वे स्वयं मेहमान नवाजी करते हैं। डॉ. सुरेश माहेश्वरी उनसे हुई अपनी पहली भेट के बारे में लिखते हैं - ''खुद

---

1. सं.डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर में संकलित लेख 'मैं : शंकर पुणतांबेकर' से उद्धृत

पानी लाए और जब मैं उठा तो दरवाजे तक बाहर छोड़ने आए। उनके पहले ही दर्शन से मैं अभिभूत था। इतना बड़ा व्यक्तित्व और मुझ जैसे सामान्य छात्र को भी दरवाजे तक छोड़ने आए।''[1] ऐसे और इस प्रकार के कई ऐसे प्रसंग हैं जो शंकर पुणतांबेकर के 'अतिथि देवो भव' वाले स्वभाव का दर्शन कराते हैं।

इस प्रकार से हम पुणतांबेकर के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलूओं को देख सकते हैं। हर पहलू उनके व्यक्तित्व में निख़ार लाता है। उनका साधापन ही उनकी असाधारणता का सबूत हैं। उनका लेखन उन्हें समाज के साथ जोड़ देता है।

1.3 कृतित्व -

शंकर पुणतांबेकर का लेखन व्यंग्य से समृद्ध है। अपने इसी व्यंग्य शैली के कारण पूरे देश में लोकप्रिय रहनेवाले पुणतांबेकर ने साहित्य के सभी विधाओं में अपनी लेखनी चलाई है। उपन्यास, नाटक, एकांकी, लघुकथा, निबंध ऐसे विभिन्न साहित्य प्रकारों में इन्होंने लेखन किया है। लेकिन व्यंग्य प्रकार में ही इनका मन अधिक लगा रहने के कारण वे एक व्यंग्यकार के रूप में प्रसिद्ध हुए। सरिता, मुक्ता, कादंबिनी, रंग, साप्ताहिक हिंदुस्तान जैसी स्तर की पत्रिकाओं में इनकी हास्य-व्यंग्य रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं।

उनकी प्रारंभिक रचनाएँ, हास्य से युक्त व्यंग्य रचनाएँ हैं, लेकिन बाद में इनके साहित्य से हास्य छूटता गया और व्यंग्य प्रखर बनता गया है। इनकी रचनाओं को विधाओं की दृष्टि से विभाजित ना कर के व्यंग्य की दृष्टि से विभाजित करना ही योग्य होगा। अत: इनकी रचनाओं को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है -

1) व्यंग्येतर रचनाएँ 2) व्यंग्य रचनाएँ

1.3.1 व्यंग्येतर रचनाएँ :

शंकर पुणतांबेकर के द्वारा लिखे गए प्रारंभिक रचनाओं में तथा अन्य कुछ रचनाओं में व्यंग्य का प्रभाव इतनी प्रखरता से नहीं दिखाई देता है। अत: ऐसी रचनाओं को व्यंग्येतर रचनाओं के रूप में लिया गया है -

---

1. सं.डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर, 'आशुतोष औघड़ महादेव 'शंकर'',पृष्ठ-22

अ.क्र.	रचना	प्रथम संस्करण	प्रकाशन
1.	कल्याणी (एकांकी संग्रह)	1950	आदित्य नारायण कपूर, विदिशा।
2.	सब से छोटा आदमी (एकांकी संग्रह)	1963	हिंदी साहित्य भंडार, लखनऊ।
3.	कलंकरेषा (उपन्यास)	1973	विश्वविजय प्रकाशन, दिल्ली।
4.	शीशे के टुकड़े (नाटक)	1974	पुस्तक संस्थान, कानपुर।
5.	भूख हड़ताल (एकांकी संग्रह)	1986	संचयन प्रकाशन, कानपुर।
6.	हरियाली और काँटे (उपन्यास)	1992	विश्वविजय प्रकाशन, दिल्ली।

1.3.2 व्यंग्य रचनाएँ :

अपने व्यंग्य - रचना साहित्य में पुणतांबेकर ने अनेक विषयों को लेकर व्यंग्य लेखन किया है। इसमें प्रमुखता से मानवीय मूल्यों के विरोधी तत्त्वों पर जोरदार व्यंग्य किया है। इन्होंने राजनीति, प्रेम, संस्कृति, धर्म, आदि विभिन्न विषयों को लेकर अपना व्यंग्य लेखन किया है। मई, 1957 में सरिता में प्रकाशित इनकी 'तमाचा' इस रचना से इन्होंने व्यंग्य जगत में प्रवेश किया। इनकी व्यंग्य से युक्त रचनाओं की सूची इस प्रकार है।

अ.क्र.	रचना	प्रथम संस्करण	प्रकाशन
1.	बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ (एकांकी संग्रह)	1972	पुस्तक संस्थान, कानपुर।
2.	रेड़ीमेड कपड़े (हास्य-व्यंग्य निबंध संग्रह)	1973	हिंदी साहित्य संसार, दिल्ली।
3.	कैक्टस के काँटे (व्यंग्य विविध)	1979	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
4.	एक मंत्री स्वर्गलोक में (व्यंग्य - उपन्यास)	1980	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
5.	बचाओ, मुझे कवियों से बचाओ (एकांकी संग्रह)	1980	आराधना ब्रदर्स, कानपुर।

अ.क्र.	रचना	प्रथम संस्करण	प्रकाशन
6.	प्रेम विवाह (व्यंग्य विविध)	1981	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
7.	विजिट यमराज की (व्यंग्य संग्रह)	1983	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
8.	अँगूर खट्टे नहीं है (व्यंग्य संग्रह)	1985	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
9.	बदनामचा (व्यंग्य संग्रह)	1988	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
10.	गुलेल - 5 भागों में (व्यंग्य संग्रह)	1993 से 1996	पुस्तकायन, दिल्ली।
11.	व्यंग्य अमरकोश	1994	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
12.	पतनजली	1996	विकास प्रकाशन, कानपुर।
13.	शतरंग के खिलाडी	1997	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
14.	दुर्घटना से दुर्घटना तक	1997	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
15.	तीन व्यंग्य नाटक	1998	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
16.	मेरी फाँसी	2000	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
17.	गिद्ध मंडरा रहा है	2000	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
18.	कट आउट	2002	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
19.	तेरहवाँ डिनर	2002	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
20.	जंगल में	2004	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
21.	पराजय की जुबली	2004	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली।
22.	आखरकार (व्यंग्य संग्रह)	2004	विकास प्रकाशन, कानपुर।
23.	मर्जी से पैदा भयो	2006	पंचशील प्रकाशन, जयपुर।

1.3.2 पुणतांबेकर की कुछ रचनाओं का संक्षिप्त परिचय :

पुणतांबेकर की हास्य - व्यंग्य लेखन से गुजरती हुई यात्रा व्यंग्य लेखन तक पहुँच गई है और आज भी अखंडीत रूप से चल रही है।

उनका हास्य-व्यंग्य एकांकी संग्रह 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओं' 1972 में प्रकाशित हुआ। जिसमें कुल चौदह एकांकियों को संकलित किया गया हैं। इनमें से नौ एकांकी अनोखेलाल नामक पात्र को लेकर लिखे गए हैं। अन्य एकांकी व्यंग्यप्रधान हैं, जो विभिन्न विषयों का उद्‌घाटन करते हैं।

इनके द्‌वारा लिखा गया 'रेडीमेड़ कपड़े' (1973) एक कमजोर व्यंग्य संग्रह मालूम पड़ता है। इसमें व्यंग्य से अधिक हास्य की प्रचूरता दिखाई देती है। इस संग्रह को पढ़कर यह नहीं कहा जा सकता कि ये वहीं पुणतांबेकर हैं जो अब व्यंग्यकार के रूप में प्रसिद्‌ध हैं।

'कैक्टस के काँटे' (1979) इस संकलन में हास्य की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती गई है और व्यंग्य का प्रभाव दिखाई देता है। इसमें कुल 21 रचनाएँ हैं।

सन् 1980 में उनका दूसरा व्यंग्य एकांकी संग्रह प्रसिद्‌ध हुआ 'बचाओ, मुझे कवियों से बचाओ' यह पहले एकांकी संग्रह की तुलना में बेहतर है। इसमें कुल चार एकांकी संकलित किए गए हैं। इसमें अंतिम एकांकी 'रंग में भंग' इसके पूर्व प्रकाशित 'बचाओ, मुझे डाक्टरों से बचाओ' एकांकी संग्रह से लिया गया है।

'एक मंत्री स्वर्गलोक में' 1980 में प्रकाशित हुआ यह एक व्यंग्य उपन्यास है। यह एक अच्छी रचना साबीत हो सकती थी लेकिन मुद्रण की गलतियों के कारण उतनी सराहना न हो सकी जितनी होनी चाहिए थी। इसमें स्वतंत्रता के बाद समाज के विभिन्न क्षेत्रों में पनप रही विसंगतियों, विडंबनाओं का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है।

इनका 1981 में प्रकाशित संग्रह 'प्रेमविवाह' भी विशेष सफल नहीं रहा। फिर भी इसकी - समीक्षक, प्रेमविवाह, पत्नी प्रवास पर कहारिन प्यारी लागे रे (परिचर्चा वक्तव्य), बालवर्ष: दो शब्द बालोद्‌वारा, राग परिवारी, सपनों के अर्थ आदि रचनाएँ उल्लेखनीय हैं।

पुणतांबेकर के व्यंग्य का सही विकास उनके व्यंग्य संग्रह 'विजिट यमराज की' (1983) में दिखाई देता है। इस संग्रह में कथ्य शैली आदि में विविधता दिखाई देती है। पुणतांबेकर में छुपे हुए एक व्यंग्यकार को यह रचना सामने लाती है।

'अंगूर खट्टे नहीं हैं' व्यंग्य संग्रह 1983 में प्रकाशित हुआ। इसमें भी व्यंग्य स्पष्ट हुआ है। इसमें संकलित रचनाएँ प्रभावशाली और नए ढ़ंग की जान पड़ती है।

इनका व्यंग्य संग्रह 'बदनामचा' 1988 में प्रकाशित हुआ। इस रचना से उनके व्यंग्य लेखन को सही अर्थ में शुरुआत हुई। अब तक की रचनाओं में प्रयुक्त व्यंग्य से भी इस रचना का व्यंग्य सशक्त मालूम पड़ता है। लघु आकार की 80 रचनाओं का संग्रह है। ये रचनाएँ विसंगतियों या विरुपताओं की झलक मात्र पेश करती है। रचनाएँ आकार में छोटी होकर भी उद्देश्य का सफलता से वहन करती है। बड़ी-बड़ी रचना भी नहीं कर पाती वह यह रचना कह जाती है। 'गागर में सागर' समा लेने की क्षमता इस संग्रह की रचनाओं में हैं।

'शतरंग के खिलाड़ी'(1997) में उनकी सेवानिवृत्ति के बाद की रचनाएँ संग्रहीत की गई हैं। पूर्ववर्ती रचनाओं की भाँति यह व्यंग्य टुकड़े-टुकडे विसंगतियों का चित्रण नहीं करता। संग्रह की शीर्षक कथा सीधे-सीधे राजनीति के चेहरे पर से नकाब हटाकर उसका विद्रुप चेहरा सामने ला कर रख देता है।

व्यंग्यकार पुणतांबेकर की आगे की रचनाओं में व्यंग्य का उत्तरोत्तर विकास होता गया है। शंकर पुणतांबेकर एक कोशकार भी है। उन्होंने 'व्यंग्य अमरकोश' नामक एक शब्दकोश भी लिखा है। यह 1994 में प्रकाशित हुआ। इसमें प्रचलित शब्दों के व्यंग्यात्मक अर्थ दिए गए है। यह करीबन 800 पृष्ठों की बृहदाकार रचना है, जिसमें करीब 9472 शब्दों के व्यंग्यार्थ दिए गए हैं। 'अमरकोश का व्यंग्य' इस लेख में डॉ.सुरेश माहेश्वरी लिखते हैं - ''संस्कृत का अमरकोश, मेदिनीकोश, हलायुध कोश, अभियान चिन्तामणि और अनेकार्थ संग्रह जैसे कोश उपलब्ध हैं। परंतु डॉ.पुणतांबेकर के 'व्यंग्य अमरकोश'जैसा कोई कोश न संस्कृत साहित्य में, न भारतीय भाषाओं में ही उपलब्ध है।''[1] यह व्यंग्य कोश हिंदी साहित्य के लिए उनकी अनुपम देन है।

संक्षेप में पुणतांबेकर एक श्रेष्ठ व्यंग्यकार तो है ही, समाज की विसंगतियों को देखनेवाली पैनी दृष्टि भी उनके पास है। उनकी व्यंग्य रचनाओं में देश की तीखी अनुभूति

---

1. सं.डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी एवं अन्य - व्यंग्य चिंतना और शंकर पुणतांबेकर, पृष्ठ - 64

दिखाई देती है। पुणतांबेकर व्यंग्यशास्त्र के ज्ञाता होने के साथ - साथ व्यंग्य के समालोचक भी हैं। उनके द्वारा लिखित शुरूआत की कुछ रचनाओं को छोड़ दे तो अन्य रचनाएँ मानवीय जीवन की विडंबनाओ, सामाजिक विसंगतियों पर व्यंग्य प्रहार करती हैं।

1.3.2.2 अप्रकाशित रचनाएँ :-

❑ पुणतांबेकर ने 106 ललित निबंध लिखे हैं, जिनका प्रकाशन तीन संग्रहों के रूप में किया जायेगा -

1) देखा जायेगा
2) अरण्य कांड
3) बेचारा सूरज ! अरे उसे तुम उगने दो !

❑ 'बिखरे पन्ने' - आत्मकथा

❑ 'जहाँ देवता मरते हैं' नामक व्यंग्य उपन्यास, जिसका अँग्रेजी अनुवाद पहले छपनेवाला है और वह अमरीका में छापा जायेगा।

1.3.3 संपादन :

1997 में 'श्रेष्ठ लघुकथाएँ' नामक लघुकथा संग्रह का संपादन इन्होंने किया। यह संग्रह पुस्तक संस्थान, कानपुर से प्रकाशित किया गया, जिसकी भूमिका को ओमप्रकाश शर्मा लघुकथा के इतिहास में मील का पत्थर मानते हैं।

❑ निष्कर्ष -

शंकर पुणतांबेकर के व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन करने के बाद यह निष्कर्ष सामने आते हैं कि उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से अमानवीय मूल्यों पर प्रखर व्यंग्य किया है। अपने बचपन से ही वे देश के प्रति एवं उसके समस्याओं के प्रति परिचित होते गए। उनका बचपन देहात में बितने के कारण देहात के लोगों की समस्याएँ उन्होंने स्वयं अनुभव की।

पुणतांबेकर एक आदर्श व्यक्तिमत्व है, जो सदा ही अपने संपर्क में आनेवाले को एक दीप-स्तंभ साबित हुआ है। एक व्यक्ति के रूप में इन्होंने अपनी भूमिका सफलता से

निभाई है। अपने व्यवहार से मित्र परिवार में प्रिय रहे हैं। जरुरतमंद लोगों की सहायता के लिए हमेशा तत्पर रहे हैं। आज भी 79-80 की उम्र में कुछ और लिखने की उनकी इच्छाशक्ति निश्चित ही सराहनीय है।

आम आदमी के जीवन की समस्याओं को इन्होंने सदा ही अपने व्यंग्य के माध्यम से उद्‌घाटित किया है। इनका व्यंग्य सीधा प्रहार करता है। व्यक्ति को सोचने पर मजबूर कर देता है। उनकी प्राथमिक साहित्य-रचनाएँ इतने प्रगल्भ विचारों से युक्त न हो कर भी कुछ मात्रा में समस्याओं, विसंगतियों के प्रति हमें जागृत करने का कार्य अवश्य करती हैं। इनकी व्यंग्य रचनाएँ विभिन्न विषयों पर प्रकाश डालती हैं। प्रेम, धर्म, समाज, राजनीति, पूँजीवाद, विवाह, संस्कृति आदि विषयों को इन्होंने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है। इनकी व्यंग्य रचनाएँ पाठकों को विसंगतियों पर विचार करने के लिए विवश कर देती हैं। इन्होंने सामाजिक, राजनीतिक आदि विभिन्न विषयों पर व्यंग्य कर के अपनी गहन अध्ययनशीलता तथा एक जागरूक लेखक का उदाहरण सामने रखा है। अत: हम कह सकते हैं कि व्यंग्यकार पुणतांबेकर का साहित्य समाज की विसंगतियों पर एक तीखा व्यंग्य है, जो समाज परिवर्तन में उपयोगी सिद्‌ध होगा।

हिंदी अध्यापक एवं विभागाध्यक्ष के रूप में सेवारत रहते हुए पुणतांबेकर ने साहित्य सृजन का भी कार्य किया। हिंदी व्यंग्य साहित्य को उन्होंने समृद्‌ध किया है। हिंदी भाषी प्रदेश के लेखक एवं आलोचक भी उनके लेखन से प्रभावित रहे। अत: वे नई दिल्ली, मध्य प्रदेश, हैदराबाद की संस्थाओं से सम्मानित हुए हैं। रामदेव शुक्ल, यशवंत व्यास, महावीर अग्रवाल, डॉ. नंदलाल कल्ला, डॉ. विनोद शंकर शुक्ल, डॉ. बालेंदु शेखर तिवारी आदि ख्यातकीर्त साहित्यिकों ने पुणतांबेकर के साहित्य का गौरव किया है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी व्यंग्य साहित्य को समृद्‌ध करनेवाले शंकर पुणतांबेकर एक सिद्‌ध हस्त व्यंग्यकार हैं। 'व्यंग्य अमरकोश' नामक कोश की रचना के कारण वे हिंदी साहित्याकाश में सदैव अमर ही रहेंगे।

❑❑❑❑